ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 112-115**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

प्राचीन भारत में चिकित्सकों की सामाजिक स्थिति

डॉ0 ऋषभ कुमार
सहायक आचार्य, इतिहास (विभागाध्यक्ष), जी. डी. बिनानी पी.जी. कॉलेज, मीरजापुर (उ0प्र0) भारत

Received-11.04.2025, Revised-18.04.2025, Accepted-24.04.2025 E-mail : rishabhbhu97@gmail.com

सारांशः ***चिकित्सा पद्धति समाज में ही उत्पन्न होती है और समाज ही उसका कार्यक्षेत्र होता है। सामाजिक व्यवस्था और सामाजिक मान्यताओं का प्रभाव चिकित्सा पद्धति और चिकित्सकों पर अवश्य पड़ता है। आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति के विकास और कार्यपद्धति पर प्राचीन भारतीय समाज का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखता है। आयुर्वेद के सामाजिक पक्ष अर्थात वैद्यों की सामाजिक स्थिति, आयुर्वेदीय विद्याध्ययन, चिकित्सा वृत्ति, आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति में महिलाओं की स्थिति आदि प्राचीन भारत की प्रचलित सामाजिक व्यवस्था से प्रभावित थी। प्राचीन भारत में प्रचलित वर्णव्यवस्था का प्रत्यक्ष प्रभाव आयुर्वेद पर भी दृष्टिगत होता है। विज्ञान का प्रतिनिधि ग्रंथ होने के कारण चरक और सुश्रुत संहिता में तार्किक विवरण की अपेक्षा थी किन्तु संहिता ग्रंथों में प्रतिसंस्कार और प्रतिलिपि बनने की प्रक्रिया एवं वर्णाश्रम धर्म आधारित सामाजिक व्यवस्था तथा उसमें होने वाले परिवर्तनों का प्रभाव स्पष्टतः चिकित्सा साहित्य में भी देखने को मिलता है। प्रस्तुत शोध पत्र में आयुर्वेद के स्रोत ग्रंथों चरक संहिता, सुश्रुत संहिता के विशेष संदर्भ में प्राचीन भारत में सामाजिक व्यवस्था से संबंधित अन्य स्रोत ग्रंथों मुख्यतः धर्मसूत्रों के विश्लेषण से प्राचीन भारत में चिकित्सों की सामाजिक स्थिति को जानने का प्रयास किया गया है।***

कुंजीभूत शब्द– चिकित्सा पद्धति समाज, वर्ण व्यवस्था, वैद्य, भिषक्, चिकित्सा वृत्ति, सामाजिक व्यवस्था, धर्मसूत्र, धनलोलुपता

प्राचीन भारत में चिकित्सक के लिए चिकित्सक, भिषक्/भिषज् और वैद्य शब्द का प्रयोग किया जाता था। वर्तमान में आयुर्वेदिक चिकित्सकों के लिए वैद्य शब्द प्रयोग बहुतायत से होता है। वैदिक काल में भिषक् शब्द का प्रयोग प्रचलित था। ऋग्वेद में अश्विनौ के लिए भिषक् शब्द का ही प्रयोग हुआ है। (ऋग्वेद 1/157/6) अथर्ववेद में भी चिकित्सक के लिए भिषक् शब्द प्रयोग हुआ है।(अथर्ववेद 5/29/1) भिषक् पुराकालीन मन्त्रविद् पारम्परिक चिकित्सक था जबकि आयुर्वेद विद्या में पारंगत (निपुण) चिकित्सक वैद्य कहलाता था।(शर्मा : 2012, पृ0सं0–615)

वेदों में भिषक् के वर्णनों का विश्लेषण करने पर तीन प्रकार के भिषक् प्रतीत होते है (विश्वकर्मा एवं द्विवेदी : 1984, पृ0सं0–565) – 1. प्राकृतिक भिषक् (अग्नि, जल, मरूत, आदि) 2. दैव भिषक् (ब्रह्मा, रूद्र, इन्द्र, वरूण, अश्विनी कुमार आदि) 3. मानुष भिषक् जो औषधियों को एकत्र करता है, बनाता है, औषधियों के प्रयोग से रोगी के रोग को दूर करता है।

संहिता ग्रंथों में भिषक्, चिकित्सक और वैद्य तीनों शब्द प्रयोग किये गये हैं। वैद्य की उत्पत्ति संस्कृत शब्द विद्या से हुई है जिसका अर्थ ज्ञान होता है। (बाशमः1998, पृ0सं0–23) उल्लेखनीय है कि अरबी भाषा का समानार्थी शब्द हकीम हिकमत से सम्बन्धित है जिसका अर्थ भी ज्ञान होता है। अंग्रेजी में प्रयुक्त शब्द डॉक्टर भी ऐसे ही समानार्थी ज्ञान से सम्बन्धित है।(बाशमः1998, पृ0सं0–23) प्राचीन भारत में वैद्य शब्द विद्वान का भी सूचक था। महाभारत और रामायण में वैद्य शब्द विद्वान और चिकित्सक दोनों के लिए प्रयुक्त हुआ है।(शर्मा : 2012, पृ0सं0–615)

ओलिवेल (2017) ने प्राचीन भारत में चिकित्सक के लिए प्रयुक्त विभिन्न शब्दों का सांख्यिकीय विश्लेषण किया है। अर्थशास्त्र में भिषक शब्द तीन बार तथा चिकित्सक शब्द चौबीस बार आया है। (ओलिवेलः2017, पृ0सं0–6) रामायण में केवल दो बार वैद्य शब्द आया है। महाभारत में भिषक् ग्यारह बार, चिकित्सक पन्द्रह बार तथा वैद्य (चिकित्सक के लिए) शब्द तेरह बार आया है। (ओलिवेल : 2017, पृ0सं0–11) चरक संहिता में चिकित्सक शब्द का प्रयोग केवल छः प्रसंगों में आया है जबकि भिषज शब्द चार सौ से ज्यादा बार तथा वैद्य अस्सी बार आया है। वहीं सुश्रुत संहिता में चिकित्सक केवल 12 बार, भिषज दो सौ पचास से ज्यादा तथा वैद्य 100 से ज्यादा बार आया है। (ओलिवेल : 2017, पृ0सं0–11) उपर्युक्त तथ्य के आधार पर निर्मित निम्न तालिका को देखें:

	शब्द की आवृत्ति		
ग्रंथ	भिषक्	वैद्य	चिकित्सक
अर्थशास्त्र	03	–	24
महाभारत	11	13	15
रामायण		02	
चरक संहिता	400 से अधिक	80	06
सुश्रुत संहिता	250 से अधिक	100 से अधिक	12

ओलिवेल (2017) प्राचीन चिकित्सकों के लिए प्रयुक्त विभिन्न शब्दों का विश्लेषण करते हुए कहतें हैं कि चिकित्सक शब्द मुख्यतः उनके लिए प्रयुक्त होता था जो चिकित्सा सेवाएँ देकर अपना जीविकोपार्जन करते थे, इनमें मुख्यतः राज्य को अपनी सेवाएँ देने वाले सैन्य चिकित्सक, पशु चिकित्सक और युद्ध घावों के उपचार के लिए बुलाये जाने वाले चिकित्सक शामिल थे। आयुर्वेद में दक्षता के विकास और चिकित्सा शिक्षा के सांगठनीकरण के बाद वैद्य शब्द विशेषण के रूप में प्रयोग होने लगा ताकि जीविकोपार्जन करने वाले चिकित्सकों को इससे अलग किया जा सके।(ओलिवेल : 2017, पृ0सं0–18)

प्राचीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था में वैद्यों को सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। वैद्यों को विद्वान माना जाता था तथा उन्हें ब्राह्मणों की श्रेणी में रखा जाता था। समाज में उन्हें आदर–सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। सामाजिक क्षेत्र के अतिरिक्त राजनीतिक क्षेत्र में भी वैद्यों को सम्मानजनक स्थिति प्राप्त थी। वैद्य राजा के जीवन का उत्तरदायित्व वहन करता था। वह राजा का शुभचिन्तक, विश्वासपात्र अधिकारी और राजा की दिनचर्या एवं रात्रिचर्या का नियंत्रक होता था।

चरक संहिता में वैद्य को प्राणाचार्य की संज्ञा देते हुए उसकी परिभाषा दी गई है जो प्राचीन काल की सामाजिक व्यवस्था में वैद्य की प्रस्थिति का अक्षरशः वर्णन करता है। चरक संहिता में कहा गया है कि जो चिकित्सक अच्छे स्वभाव वाला हो, बुद्धिमान हो,

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

अपने कार्य में दक्ष हो, चिकित्सा कार्य में सदैव तत्पर हो, द्विजाति(ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य) का हो, आयुर्वेदशास्त्र का भली प्रकार अध्ययन किया हो, ऐसे वैद्य को प्राणाचार्य कहते हैं। इस प्रकार का प्राणाचार्य प्राणिमात्र के लिए गुरू के समान वंदनीय है। (चरक संहिता/चिकित्सा स्थान 1/4.45)

संहिता ग्रंथों में वैद्य के सम्बन्ध में विस्तृत विवरण दिया गया है। समाज में वैद्य की अतिसम्माननीय स्थिति थी क्योंकि वैद्य जीवनदान देता है जो सबसे बड़ा दान माना गया है। अन्य सभी दान इसी पर आश्रित है इसलिए इसको देने वाला सबसे ऊपर होता है। वैद्य को प्राणाभिसर कहा गया है क्योंकि यह जाते हुए प्राणों को शरीर में वापस ला देता है। शिक्षित व्यक्ति को ऐसे क्षेत्रों मे निवास न करने को कहा गया है जहाँ कोई चिकित्सक न रहता हो। विष्णुपुराण में कहा गया है कि स्नातक अर्थात वेदादि का अध्ययन किया हुआ ऐसे राज्य में निवास न करे जहाँ चिकित्सक उपलब्ध न हो।

राजदरबार में चिकित्सक को विशेष सम्मान और विशेषाधिकार था। कौटिल्य ने भूमिदान देने के सम्बन्ध में चिकित्सकों को ब्राह्मणों के साथ रखा है जो उनकी उच्च प्रतिष्ठा का द्योतक है।(चट्टोपाध्याय : 193, पृ0 स0 – 96) संहिताग्रंथों में सद्गुणयुक्त वैद्य को ही समाज के लिए अच्छा माना गया है और उसी को सम्मान देने की बात कही गयी है। प्राचीन काल में चिकित्सा व्यवसाय को धर्माथ और सेवार्थ करने वाले को ही वास्तविक वैद्य स्वीकार किया गया है। च(ा.सं. चि.1/4.56–57) वैद्य को रोगी को अपने पुत्र के समान मानकर उसकी चिकित्सा में प्रवृत्त होने का उपदेश है। (च.सं. चि.1/4.55) वैद्यों से अपेक्षा की जाती थी कि वे बिना किसी उपहार आदि की अपेक्षा किये चिकित्सा कार्य करें, जो वैद्य अर्थ और काम के लिए नहीं अपितु प्राणिमात्र पर दयाभाव से चिकित्सा में प्रवृत्त होता है वह सर्वश्रेष्ठ और मोक्ष का अधिकारी होता है,(च.सं. चि.1/4.57) जो पुरूष आजीविका के लिए चिकित्सा को बाजार में बेचते है, वे स्वर्ण के ढेर को छोड़कर धूलि के ढेर को पाते है।(च.सं. चि.1/4.58) जो चिकित्सक प्राणियों पर दया भाव से चिकित्सा कर्म करता है उसकी सब कामनायें सिद्ध होती है और वह सभी सुखों का भोगता है।

प्राचीन भारतीय साहित्य में जो वैद्य धनलिप्सा के लिए चिकित्सा सेवा में आते थे उनकी निंदा की गई है। कालांतर में जब वैद्यों ने चिकित्सा को अर्थोपार्जन का साधन बना लिया तो समाज में उनका तिरस्कार होने लगा। वराहमिहिर ने अपनी पुस्तक वृहत्संहिता में पण्यभिषक की चर्चा की है जिसका अर्थ ऐसे वैद्य से लगाया गया है जो वस्तु के समान चिकित्सा विद्या का विक्रय करते हों। (बृहत्संहिता 7/6) धर्मसूत्रों और स्मृतिग्रंथों में चिकित्सकों की निन्दा के कई उद्धरण भरे पड़े है। चट्टोपाध्याय (2001) ने अपनी पुस्तक प्राचीन भारत में विज्ञान और समाज में इस निंदा का विश्लेषण कर यह बताया है कि वस्तुतः चिकित्सक तत्कालीन सामाजिक और धार्मिक व्यवस्था के प्रचलित सिद्धांतों के प्रतिकूल थे क्योंकि चिकित्सा का आधार तर्क था और सामाजिक–धार्मिक व्यवस्था आस्था पर आधारित थी। दूसरी तरफ चिकित्सा सेवा में वर्ण व्यवस्था और जाति सम्बन्धी निषेधों का पालन भी नहीं होता था क्योंकि चिकित्सा करते समय रोगी को स्पर्श आदि करना पड़ता था। इस कारण भी स्मृतिकारों की निंदा इन चिकित्सकों को झेलनी पड़ी थी। शर्मा (2012) चिकित्सकों को हेय दृष्टि से देखने का कारण निम्न बताते हैं – कई वैद्य धनलोलुप प्रवृत्ति के कारण समाज का शोषण करते थे। निर्धन व्यक्तियों से भी उनकी मजबूरी का फायदा उठाकर धन लेते थे। चिकित्सक धार्मिक दृष्टि से अभक्ष्य पदार्थो लहशुन आदि का प्रयोग करते थे।

इनके अतिरिक्त कालांतर में निम्न जाति और वर्णसंकर लोग भी चिकित्सक बनने लगे थे। व्यवसाय के रूप में ब्राह्मण और क्षत्रियों को चिकित्सावृत्ति अपनाने की अनुमति नहीं थी। (च.सं. सूत्र. 30.27) बाद में बौद्ध आदि नास्तिक लोग भी चिकित्सा सेवा में आने लगे। उल्लेखनीय है कि बौद्ध संघों में चिकित्सा कार्य की शुरूआत विहार में केवल भिक्षु–भिक्षुणियों के लिए ही हुई थी परन्तु कालांतर में बौद्ध संघ सामान्य जन को भी चिकित्सा सेवा देने लगे थे। (जिस्क : 1991) विष्णुधर्मोत्तर पुराण, वायुपुराण, मनुस्मृति आदि ग्रंथों में शल्यचिकित्सकों के साथ भोजन न करने तथा उनका दिया अन्न आदि को ग्रहण न करने का निर्देश दिया गया है क्योंकि वे लोग खून, पीब आदि में लिप्त रहते थे। (मनुस्मृति 4.212)

धर्मशास्त्रों आपस्तम्ब धर्मसूत्र, मनुस्मृति आदि में मुख्यतः वैद्यों से खान–पान सम्बन्धीय बातों के लिए मनाही की गई है। मनुस्मृति में वैद्य के अन्न को मवाद की तरह दूषित बताया गया है।(मनुस्मृति 4.212) आपस्तम्ब और गौतम धर्मसूत्र में शल्य चिकित्सक के द्वारा दिये गये अन्न को खाने से मना किया गया है। (गौतम0 2.8.17, आपस्तम्ब0 1.18.21,1.19.14) वशिष्ठ धर्मसूत्र में कायचिकत्सक से प्राप्त अन्न को ग्रहण करने से मनाही है तथा उनसे प्राप्त भिक्षा भी अपवित्र मानी गई है। (वशिष्ठ0 14.2, 19) इसका कारण स्वच्छता से सम्बन्धितद भी हो सकता है। प्राचीन काल में रोगी की परीक्षा के सम्बन्ध में मुख, नाक, कान, हाथ तथा जिह्वा का प्रयोग किया जाता था। (सु0सं0 सूत्र0 10.3–4) संभवततः जिह्वा से मूत्रादि का परीक्षण तक किया जाता था। समभवतः इसी कारण धर्मशास्त्रों में वैद्यों से खाने–पीन की वस्तुएँ लेने से मना किया गया था। मेरा मानना है कि वैद्यों से खाने–पीन की वस्तुएँ लेना निषेध करने में एक प्रमुख कारण साफ–सफाई और शुद्धता भी रहा होगा।

धर्मशास्त्रों में उल्लेखित वैद्यों के लिए सामाजिक और धार्मिक निषेध सम्बन्धी बातों को वैद्यों के लिए अधिक से अधिक चरित्रवान और सद्गुणी होने, सेवा के लिए चिकित्सा करने, धन को ज्यादा महत्व न देने आदि के रूप मे समझ सकते है। संभवतः प्राचीन काल में वैद्य अतिशय धन के लालची हो गये होंगे इसीलिए वैद्यों के लिए अर्थ हेतु चिकित्सा न करने को प्रशंसनीय बताया गया है। (च0सं0 चि01.4.56,58) चूँकि वैद्य चिकित्सा कर्म करते समय रोगी के परिवार और रोगी की कई गुप्त बातों की जानकारी प्राप्त कर लेते होंगे। जिसका कालांतर में दुष्प्रयोग करते रहे होंगे इसलिए संहिता ग्रंथों में इस बात पर बल दिया गया है कि वैद्य को रोगी से सम्बन्धित गुप्त बातों का प्रकाशन कदापि नहीं करना चाहिए न ही इसका लाभ उठाना चाहिए। चरक संहिता में जिस प्रकार स्पष्ट रूप से नकली वैद्यों के बारे में बताया गया है और उससे जीवन पर संकट होने की बात कही गई है, उससे हम अनुमान लगा सकते हैं कि प्राचीन काल में नकली वैद्यों की संख्या बढ़ गई होगी।

चिकित्सा सेवा एवं प्राचीन वर्ण– प्राचीन सामाजिक व्यवस्था में वैद्यों का कोई स्वतंत्र एवं पृथक वर्ण नहीं था। महाभारत और रामायण में वैद्य शब्द विद्वान और चिकित्सक दोनों अर्थों में प्रर्युक्त हुआ है। विद्वान चिकित्सक ही वैद्य कहलाने का अधिकारी था। व्यवसाय के रूप में चिकित्सा वृत्ति से अपने परिवार का पालन पोषण करने का उललेख ऋग्वेद (10/97/4) में प्राप्त होता है। (विश्वकर्मा एवं द्विवेदी :1984, पृ.सं0–602)

प्राचीन काल में चिकित्सक बनने के लिए शस्त्र और प्रवृत्ति अर्थात संहिता ग्रंथों का अध्ययन और चिकित्सा कर्म का अनुभव दोनों आवश्यक थे। शास्त्रज्ञान अर्थात सैद्धांतिक ज्ञान प्राचीन काल की शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत ही मिलता था। प्राचीन समाज में शिक्षा का संचालन वर्णव्यवस्था पर आधारित था। वर्ण सम्बन्धी प्रतिषेध चिकित्सा विद्या और सेवा पर भी लागू होते थे। चरक संहिता

के सूत्रस्थान में वर्णित है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्यों को आयुर्वेद का अध्ययन करना चाहिए।(च0 स0 सूत्र0 30.27) सुश्रुत संहिता में भी कहा गया है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य को ही भिषक शास्त्र का उपदेश देना चाहिए। (सु0स0 सूत्र0 2.2) स्पष्ट है कि वर्ण व्यवस्था में तीन वर्णों– ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य के योग्य सदस्यों को आयुर्वेद के अध्ययन तथा वैश्यों को चिकित्सा को एक व्यवसाय के रूप में आयुर्वेद के प्रयोग की अनुमति थी।

उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि समाज के तीन वर्णों के योग्य विद्वान जिन्हें आयुर्वेद शास्त्र का पर्याप्त ज्ञान हो, वे वैद्य का कार्य कर सकते थे। हालाँकि इसके लिए उन्हें पहले अपनी योग्यता सिद्ध करनी पड़ती थी। अपनी योग्यता सिद्ध करने के बाद राजा की अनुमति से योग्य व्यक्ति वैद्य के रूप में कार्य करने के लिए स्वतंत्र होता था। (सु0स0 सूत्र0 10.2) काश्यप संहिता में भी राजा द्वारा अनुज्ञात हो जाने पर ही चिकित्सा कार्य करने की बात कही गई है। (का0सं0 वि01.6) शुक्रनीति में भी कहा गया है कि आम जन के बीच चिकित्सा कार्य करने के पूर्व राजा की अनुज्ञा आवश्यक है। (शुक्रनीति 1/303)

चूँकि चिकित्सा को व्यवसाय के रूप में अपनाने के लिए आयुर्वेद शास्त्र की शिक्षा अनिवार्य थी और शिक्षा प्राप्त करने के लिए वर्णव्यवस्था आधारित शिक्षा पद्धति प्रचलित थी जिसमें शूद्रों के लिए शिक्षा ग्रहण करना संभव नहीं था। इस तरह शूद्र स्वयमेव चाहकर भी चिकित्सा व्यवसाय में नहीं आ सकते थे। साथ ही चरक संहिता में केवल वैश्य को ही चिकित्सा व्यवसाय में आयुर्वेद के प्रयोग की अनुमति थी। स्पष्ट है कि चरक संहिता के अनुसार, चिकित्सा व्यवसाय को आजीविका के रूप में केवल वैश्य ही अपना सकते थे।

सुश्रुत संहिता में उदार रूख अपनाते हुए उत्तम कुल और गुणसम्पन्न शूद्रों को वैदिक मंत्र का भाग छोड़कर और उपनयन के बिना आयुर्वेदीय शिक्षा देने की बात कही गई है। सुश्रुत संहिता चूँकि शल्य चिकित्सा का ग्रंथ है जिसमें शवच्छेदन भी होता था, इसलिए शूद्रों को शल्य चिकित्सा का ज्ञान देने की बात कही गई होगी, तॉकि शव स्पर्श जैसा अपवित्र कार्य द्विज को न करना पड़े। इस तरह शूद्रों को चिकित्सा व्यवसाय के अन्तर्गत शल्य चिकित्सा में आने की सम्भावना बनती है। परन्तु चिकित्सा सेवा में आने के लिए राजा की अनुमति अनिवार्य थी और प्राचीन भारत में राजा वर्णाश्रम धर्म का संरक्षक होता था। (काणे : 1946, वाल्यूम–3, पृ0सं0–55) अतः पुनः शूद्रों के चिकित्सा सेवा में आने की सम्भावना धूमिल हो जाती है। चूँकि शूद्रों का मुख्य कार्य अन्य वर्णों की सेवा करना था।(अर्थशास्त्र 1/1/2) वैद्यों की सेवा में परिचारक के रूप में शूद्र सम्भवतः शवच्छेदन, पशु चिकित्सा में सहायता आदि कार्य करते रहे होंगे। आयुर्वेदीय शिक्षा व्यवस्था में स्त्रियों की सहभागिता न होने से स्त्रियों के चिकित्सा सेवा में आने का सवाल ही नहीं उठता।

चिकित्सा सेवा के सम्बन्ध में जहाँ चरक संहिता केवल वैश्यों को ही चिकित्सा सेवा अपनाने की बात कहती है, सुश्रुत संहिता में ऐसा कोई उल्लेख नहीं मिलता। सुश्रुत संहिता में वैद्य बनने के लिए इस बात पर बल दिया गया है कि वह शस्त्र और शास्त्र अर्थात सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों रूपों में चिकित्सा का ज्ञानी हो। इसके अलावा वैद्य बनने के लिए सुश्रुत संहिता राजा की अनुमति को भी आवश्यक मानता है। संहिता ग्रंथों के विश्लेषण से पता चलता है कि आयुर्वेदीय शिक्षा व्यवस्था के प्रचलित सामाजिक व्यवस्था के अनुरूप होने के कारण शूद्रों और स्त्रियों के वैद्य बनने की सम्भावना नहीं थी। साथ ही अधिकांश चिकित्सा सेवा में वैश्यों के ही आने की सम्भावना ज्यादा थी क्योंकि ब्राह्मण का काम अध्ययन–अध्यापन (अर्थशास्त्र 1/1/2) और क्षत्रियों(अर्थशास्त्र 1/1/2) का कार्य राज्यव्यवस्था से सम्बन्धित था।

निष्कर्ष – आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति के अन्तर्गत आयुर्वेद की शिक्षा, चिकित्सा सेवा, समाज में वैद्यों की स्थिति पर प्राचीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। प्रचलित सामाजिक व्यवस्था के अनुरूप शूद्र और स्त्रियों की आयुर्वेदीय शिक्षा में सहभागिता नहीं होती थी। चिकित्सा सेवा में केवल वैश्यों को ही आजीविका के लिए इसे अपनाने की अनुमति थी। समय के साथ सामाजिक व्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों का प्रभाव आयुर्वेदीय चिकित्सा व्यवस्था पर भी देखने को मिलता है। सुश्रुत संहिता में शूद्रों को बिना वैदिक मंत्रों और उपनयन के आयुर्वेदीय शिक्षा देने का विवरण मिलता है जिसे हम सामाजिक व्यवस्था में हुए परिवर्तन के प्रभाव के रूप में देख सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची–

1. विद्यालंकार, जे0.2012. चरक संहिता महर्षिणा भगवताग्निवेशेन महामुनिना चरकेण प्रतिसंस्कृता–पूर्वो भागः.मोतीलाल बनारसीदास. दिल्ली.
2. विद्यालंकार, जे0.2012 चरकसंहिता महर्षिणा भगवताग्निवेशेन महामुनिना चरकेण प्रतिसंस्कृता उत्तरो भागः.मोतीलाल बनारसीदास. दिल्ली.
3. शास्त्री0 ए0डी0.2018. सुश्रुतसंहिता आयुर्वेदतत्त्वदीपिका हिन्दीव्याख्या वैज्ञानिकविमर्शोपेता भाग–1. चौखम्भा संस्कृत संस्थान. वाराणसी.
4. शास्त्री0 ए0डी0. 2018. सुश्रुतसंहिता आयुर्वेदतत्त्वदीपिका हिन्दीव्याख्या वैज्ञानिकविमर्शोपेता भाग–दो. चौखम्भा संस्कृत संस्थान. वाराणसी.
5. मिहिरचन्द्र. 1952. शुक्रनीति श्रीमच्छुकाचार्यविनिर्मित. खेमराज श्रीकृष्णदास. मुम्बई. दिनांक 15.11.2019 को देखा गया https://ia801606.us.archive.org/28/items/in.ernet.dli.2015.343255/2015.343255.99999990232043.pdf
6. उप्रैती, टी0. 2001. याज्ञवल्क्य स्मृतिः (हिन्दी अनुवाद एवं मिताक्षरा संस्कृतव्याख्यानुसारि सुधा व्याख्या). परिमल पब्लिकेशन्स दिल्ली.
7. ओलिवेल, पी0. 1999. धर्मसूत्राज–दी लॉ कोड ऑफ आपस्तम्ब, गौतम, बौधायन एण्ड वशिष्ठ ट्रांसलेटेड इन इंग्लिश फ्राम ओरिजिनल संस्कृत. आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस. न्यूयार्क. दिनांक 12.08.2019 को देखा गया (https://ia800405.us.archive.org/3/items/DharmasutrasTheLawCodesOfApastambaGautamaBaudhayanaAndVasistha/Dharmas%C5%ABtras%20%20The%20Law%20Codes%20of%20%C4%80pastamba%2C%20Gautama%2C%20Baudh%C4%81yana%20and%20Vasi%E1%B9%A3%E1%B9%ADha.pdf)
8. ब्लूफील्ड, एम0. 1897. हिम्स ऑफ दी अथर्ववेद ई–बुक. दिनांक 12.08.2019 को देखा गया- (https://www.sacred-texts.com/hin/sbe42/index.htm)
9. गैरोला, वी0. 1984. कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम् हिन्दी व्याख्या सहित. चौखम्भा विद्याभवन. वाराणसीफ।
10. घाणेकर, बी0जी0. 2008. सुश्रुतसंहिता सूत्रस्थानम् आयुर्वेदरहस्यदीपिकाख्यया हिन्दीव्याख्यया समुळसिता. मेहरचन्द, लछमनदास पब्लिकेशन्स. नई दिल्ली।
11. पाण्डेय, यू0. 1966. गौतमधर्मसूत्राणि हिन्दी व्याख्याविभूषित. चौखम्भा संस्कृत सीरीज. वाराणसी. दिनांक 15.11.2019 को देखा गया https://ia801600.us.archive.org/13/items/in.ernet.dli.2015.429882/2015.429882.gautama-dharma.pdf)

12. ओलिवेल, पी0. 2017. दी मेडिकल प्रोफेशन इन ऐन्शिएन्ट इण्डियाः इट्स सोशल, रीलिजियस एण्ड लीगल स्टेटस. ई जर्नल ऑफ इण्डियन मेडिसिन. 9. (दिनांक 05.08.2019 को देखा गया)
13. शुक्ला, वी0 और त्रिपाठी, आर0. 2013. आयुर्वेद का इतिहास एवं परिचय. चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान. दिल्ली।
14. शर्मा, पी0. 2012. आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास. पुनर्मुद्रित संस्करण. चौखम्भा ओरियन्टालिया. वाराणसी।
15. विद्यालंकार, पी0. 1923. कौटिल्य अर्थशास्त्र (हिन्दी अनुवाद). मोतीलाल बनारसीदास. लाहौर।
16. शर्मा, पी0. 1992. हिस्ट्री ऑफ मेडिसिन इन इण्डिया फ्राम एंटीक्विटी टू 1000 ई0. इण्डियन नेशनल साइंस एकैडमी. नई दिल्ली।
17. विश्वकर्मा, एच एवं द्विवेदी, यू0. 1984. अथर्व–चिकित्सा–विज्ञान. कृष्णादास अकादमी. वाराणसी।
18. रैना, बी0एल. 1990. हेल्थ साइंस इन ऐन्शिएंट इण्डिया. कामनवेल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
19. लोचन, के0. 2003, मेडिसिन्स ऑफ अर्ली इण्डिया. चौखंभा संस्कृत भवन. वाराणसी।
20. मिश्र, जे0. 2001, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना।
21. जिस्क, के0जी0. 1991. एसेटीसिज्म एंड हीलिंग इन ऐंशिएंट इण्डिया. आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस. न्यूयार्क।
22. चट्टोपाध्याय, डी0. 2001. प्राचीन भारत में विज्ञान और समाज. अनुवादित अंग्रेजी से द्वारा व्यास, नरेंद्र. ग्रंथ शिल्पी. दिल्ली।
23. गैरोला, वी. 2011. कैटिलीय अर्थशास्त्रम्. चौखम्बा विद्याभवन. वाराणसी.।
24. काने, पी0वी0. 1946. हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र (ऐंशिएंट एण्ड मेडिवल रीलिजीयस एण्ड सिविल लॉ) वाल्यूम–तीन. भण्डारकर आरियेण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट. पूना।
25. काने, पी0वी0. 1946. हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र (ऐंशिएंट एण्ड मेडिवल रीलिजीयस एण्ड सिविल लॉ) वाल्यूम–एक. अनुवादित अंग्रेजी से द्वारा कश्यप, अर्जुन. हिन्दी समिति सूचना विभाग. लखनऊ।

*****